International Journal of Humanities and Social Science Invention (IJHSSI)
ISSN (Online): 2319 – 7722, ISSN (Print): 2319 – 7714
www.ijhssi.org ||Volume 14 Issue 8 || August 2025 || PP. 203-207

जैन धर्म में संथारा प्रथा और जीवन का अधिकार: एक कानूनी विश्लेषण

डॉ.हंसा शर्मा

सहायक आचार्य,राजनीति विज्ञान, राजनीति विज्ञान विभाग,
बी.एन.डी.राजकीय कला महाविद्यालय, चिमनपुरा, शाहपुरा(जयपुर)

सारांश

यह शोध पत्र जैन धर्म में संथारा प्रथा / सल्लेखना और भारतीय संविधान में निहित जीवन के अधिकार के बीच के विरोधाभास और टकराव का विश्लेषण करता है। जैन साहित्य और परंपरा में संथारा को आत्महत्या नहीं अपितु मोक्ष की ओर एक आध्यात्मिक और स्वैच्छिक यात्रा माना गया है, जिसमें व्यक्ति संयम, सम्मान और वैराग्य से मृत्यु को स्वीकार करता है। वहीं भारतीय संविधान का अनुच्छेद 21 जीवन के अधिकार की वकालात करता है। इस अधिकार में यह तथ्य अन्तर्निहित है कि कोई व्यक्ति अपना जीवन छीन नहीं सकता। भारतीय दण्ड संहिता की धारा-309 आत्महत्या के प्रयास को अपराध मानता रहा है। किंतु नवनिर्मित भारतीय न्याय संहिता(बीएनएस) मे भारतीय दण्ड संहिता की धारा-309 सदृश कोई प्रावधान नहीं है। अर्थात भारतीय न्याय संहिता आत्महत्या के प्रयास को अपराध नहीं मानता है। यद्यपि न्यायपालिका के बदलते रूख ने संथारा को विवादास्पद बना दिया था किंतु सुप्रीम कोर्ट द्वारा हाईकोर्ट के निर्णय पर स्थगन आदेश देकर यह स्पष्ट किया गया कि इस विषय को केवल कानूनी ही नहीं अपितु धार्मिक और नैतिक दृष्टिकोण से भी देखा जाना चाहिए। इस शोध पत्र का उद्देश्य भी संथारा की धार्मिक मान्यता और जीवन के अधिकार के बीच संतुलन स्थापित करना है, साथ ही यह विश्लेषण करना कि क्या संथारा प्रथा भारतीय संविधान के दायरे में है।

बीज शब्द:- *संथारा, जीवन का अधिकार, भारतीय संविधान, जीवन एवं व्यक्तिगत स्वतंत्रता, धार्मिक स्वतंत्रता, आत्महत्या।*

प्रस्तावना

भारत एक बहुधार्मिक, बहुभाषी और बहुसांस्कृतिक राष्ट्र है जहाँ विविध परंपराएँ हजारों वर्षों से समानांतर रूप से अस्तित्व में हैं। इस वैविध्यपूर्ण समाज में प्रत्येक धर्म, संप्रदाय और समुदाय की अपनी ख़ास जीवन दृष्टि, दार्शनिक परंपरा और सामाजिक अनुष्ठान हैं, जिनका संरक्षण भारत का संविधान करता है। जैन धर्म, जो कि श्रमण परंपरा से उत्पन्न हुआ, एक ऐसा प्राचीन धर्म है जो आत्मशुद्धि, कर्म सिद्धांत और मोक्ष की ओर अग्रसर होने की धारणा पर आधारित है। जैन धर्म का सबसे केंद्रीय तत्व "अहिंसा" है, जो न केवल बाहरी हिंसा को रोकने की बात करते हैं अपितु आंतरिक विचारों, वाणी और इच्छाओं में भी हिंसा के अभाव को महत्व देता है।(1) इस धर्म के अनुयायियों की धार्मिक जीवनचर्या में "संथारा" या "सल्लेखना" नामक एक ऐसी विशिष्ट तपस्या है, जिसे मृत्यु के

अंतिम चरण में आत्मा की शुद्धि हेतु किया जाता है। यह प्रथा मनुष्य के विवेक, स्वैच्छा और धार्मिक साधना का अंतिम पड़ाव मानी जाती है।(2) किंतु आधुनिक भारत के संवैधानिक ढांचे में, विशेषकर जीवन के अधिकार के प्रकाश में, यह प्रश्न खड़ा होता है कि क्या संथारा जैसी प्रथा व्यक्ति के जीवन के अधिकार के खिलाफ है अथवा यह धार्मिक स्वतंत्रता के अंतर्गत संरक्षित एक धार्मिक अभ्यास है?

संथारा का अभिप्राय है 'पूर्ण संयम और आत्म-संयम के साथ भोजन और जल का क्रमिक त्याग कर स्वयं की आत्मा को शरीर से मुक्त करने की प्रक्रिया'। यह कोई आकस्मिक या भावावेश में लिया गया निर्णय नहीं होता अपितु एक आध्यात्मिक साधक के लिए यह समस्त जीवन के तप और त्याग का अंतिम पड़ाव होता है। जैन वांग्मय में संथारा को "महाव्रत" की श्रेणी में रखा गया है जो आत्मा को कर्मबन्ध से मुक्त कर मोक्ष के पथ पर अग्रसर करता है। सल्लेखना प्रथा कोई "नकारात्मक" मृत्यु नहीं है अपितु एक "ध्यानसहित" और "संतुलित" मृत्यु है जो दुःख, भय या अवसाद से प्रेरित नहीं होती। जैन समाज में ऐसे व्यक्ति जो लम्बी बीमारी, वृद्धावस्था या जीवन के अंतिम पड़ाव में किसी भी तरह की सांसारिक लालसा से मुक्त हो चुके हैं वे संथारा की अनुमति लेते हैं। यह अनुमति गुरु, संघ और परिवार की सहमति से दी जाती है। यह प्रक्रिया दिनों, हफ्तों, कभी-कभी महीनों तक चलती है और इसका मूल उद्देश्य मृत्यु से भागना नहीं अपितु मृत्यु का गरिमा के साथ स्वागत करना होता है।(3) अतः संथारा को केवल आत्महत्या कहना न केवल इसकी गहराई की उपेक्षा है अपितु जैन धर्म की बौद्धिक और धार्मिक परंपरा की संवेदनशीलता की अवहेलना भी है।

संवैधानिक और कानूनी परिप्रेक्ष्य

संविधान का अनुच्छेद-21 भारत के प्रत्येक नागरिक को "जीवन और व्यक्तिगत स्वतंत्रता" का अधिकार देता है। यह अधिकार केवल सांस लेने तक सीमित नहीं बल्कि "गरिमामय जीवन" की अवधारणा से संलग्न है।(4) इस अनुच्छेद की व्याख्या सुप्रीम कोर्ट ने कई ऐतिहासिक निर्णयों में इस रूप में की है कि इसमें 'मेनका गांधी बनाम भारत संघ' वाद प्रमुख है। "जीवन की गुणवत्ता", "आत्मसम्मान", और "विवेकयुक्त स्वायत्तता" की बात न्यायपालिका और नागरिक समाज की बहसों में समय-समय पर प्रभावी ढंग से उठती रहती है। जब कोई व्यक्ति अपनी इच्छा से, पूर्ण मानसिक चेतना और आध्यात्मिक विश्वास के साथ जीवन त्याग का निर्णय लेता है तो यह न तो निराशा का परिणाम होता है और न ही सामाजिक दबाव का। अतः यह कहना है कि संथारा संविधान के अनुच्छेद 21 का उल्लंघन है, एकतरफा और सतही विश्लेषण है। इसके उलट संथारा को अनुच्छेद-21 की विस्तृत परिधि में "गरिमा के साथ मृत्यु" का अभ्यास माना जाना चाहिए।

जैन धर्म की सल्लेखना प्रथा की व्याख्या भारत के संविधान के अनुच्छेद-25 के अन्तर्गत नागरिकों को प्राप्त धार्मिक स्वतंत्रता के अधिकार के दायरे में भी होनी चाहिए। स्वतंत्रता अधिकार केवल पूजा पद्धति तक सीमित नहीं अपितु धार्मिक आचरण, संस्कार, परंपरा और जीवनशैली को भी शामिलि करता है, जब तक कि वे सार्वजनिक व्यवस्था, नैतिकता और स्वास्थ्य के खिलाफ न हों।(5) इस दृष्टिकोण से देखा जाये तो संथारा एक धार्मिक आचरण है, जो जैन धर्म के अनुयायियों के लिए अत्यंत पवित्र और अनिवार्य माना जाता है। यह केवल एक वैयक्तिक आध्यात्मिक प्रक्रिया नहीं अपितु सामुदायिक विश्वास और धार्मिक पहचान का आधार भी है। अतः इसे केवल

कानूनी प्रतिबंधों की कसौटी पर कसना धार्मिक स्वतंत्रता की भावना के विरुद्ध होगा। जहाँ तक कानूनी परिप्रेक्ष्य की बात है भारतीय दण्ड संहिता की धारा-309 के अन्तर्गत आत्महत्या कानूनी जुर्म है। यद्यपि भारतीय दंड संहिता के स्थान पर लाई गई भारतीय न्याय संहिता में धारा 309 जैसा कोई प्रावधान नहीं अर्थात भारतीय न्याय संहिता में आत्महत्या को अपराध नहीं माना गया है इसके पीछे मुख्य वजह यह है कि आत्महत्या मानसिक अवसाद की उपज है। एक मनोरोगी दंड का नहीं अपितु संवेदना और देखभाल का पात्र है।

संथारा प्रथा और नागरिक संगठनों का ऐतराज

हालांकि संथारा के समर्थन में प्रस्तुत उपरोक्त सभी तर्कों के बावजूद इस प्रथा के विरुद्ध उठने वाली आपत्तियों को भी गंभीरता से विश्लेषित करना आवश्यक है। संथारा की आलोचना करने वालों का तर्क है कि यह एक "ग्लोरिफाइड सुसाइड" यानी "महिमामंडित आत्महत्या" है, जिसे धार्मिक आस्था के नाम पर सामाजिक स्वीकृति दी जा रही है। उनके अनुसार, वृद्ध, बीमार या कमजोर वर्ग के लोग कई बार पारिवारिक या धार्मिक दबाव में इस मार्ग को चुनते हैं, जो उनके वास्तविक विवेक और स्वायत्तता पर प्रश्नचिह्न लगाता है। विशेष रूप से महिलाओं, विधवाओं या मानसिक रूप से निर्बल व्यक्तियों पर यह एक प्रकार का सामाजिक नियंत्रण भी बन सकता है। व्यक्ति का जन्म और मृत्यु प्रकृति की देन है। ऐसे में एक लोक कल्याणकारी राज्य किसी व्यक्ति को इच्छा मृत्यु का अधिकार कैसे दे सकता है। यदि कोई व्यक्ति शारीरिक और मानसिक रूप से अस्वस्थ है तो राज्य का दायित्व उनकी चिकित्सा और सेवा करना है। संथारा का विरोध करने वाले नागरिक संगठनों का तर्क है कि किसी भी प्रथा को इस आधार पर स्वीकार नहीं किया जा सकता कि यह प्रथा किसी धर्म का अभिन्न हिस्सा है या दीर्घकाल से चली आ रही है। प्रगतिशील समाज हर प्रथा को अपने समय की कसौटी पर कसता है। यदि धार्मिक स्वतंत्रता के नाम पर तीन साल की बच्ची का संथारा करा दिया जाता है तो एक प्रगतिशील समाज कैसे खामोश रह सकता है। बच्चे किसी परिवार का हिस्सा ही नहीं होते हैं अपितु समाज और राष्ट्र की धरोहर होते हैं। इन्हीं बच्चों में से कोई बड़ा होकर वैज्ञानिक, चिकित्सक, राजमर्मज्ञ और समाज सुधारक बनता है जो अपने ज्ञान, अनुभव और कर्म से समाज को रोशन करता है। गैलिलियो, न्यूटन, एडिसन, मदर टेरेसा, ज्योतिबा फूले, डॉ.कलाम भी कभी बच्चे थे, यदि इनका भी जीवन किसी धार्मिक प्रथा की भेंट चढ गया होता तो देश और दुनिया को को कितना नुकसान हुआ होता।

संथारा पर न्यायपालिका का बदलता रूख

संथारा के मुद्दे पर भारतीय न्यायपालिका का रूख बदलता रहा है। वर्ष 2006 में राजस्थान उच्च न्यायालय ने "निखिल सोनी बनाम भारत संघ" प्रकरण में संथारा को आत्महत्या घोषित करते हुए भारतीय दंड संहिता की धारा 306 (आत्महत्या के लिए उकसाना) और 309 (आत्महत्या का प्रयास) के अंतर्गत इसे अपराध घोषित किया।(6) गौरतलब है कि राजस्थान उच्च न्यायालय ने संथारा पर निर्णय देते वक्त संविधान के अनुच्छेद-21 को केन्द्र में रखा। हाईकोर्ट का यह निर्णय जैन समुदाय में व्यापक आक्रोश का कारण भी बना। जैन समाज ने इसे न केवल धार्मिक स्वतंत्रता पर प्रहार माना, बल्कि अपने धार्मिक अस्तित्व को संकट में डालने वाला निर्णय करार दिया।

राजस्थान उच्च न्यायालय के इस निर्णय के विरुद्ध सुप्रीम कोर्ट में याचिका दायर की गई और वर्ष 2015 में सर्वोच्च न्यायालय ने राजस्थान हाईकोर्ट के फैसले पर रोक लगा दिया। माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने संथारा पर निर्णय देते समय संविधान के अनुच्छेद-21 के साथ-साथ अनुच्छेद-25 को भी ध्यान में रखा। सुप्रीम कोर्ट ने स्पष्ट रूप से कहा कि संथारा को आत्महत्या कहने से पूर्व यह आवश्यक है कि यह जांचा जाए कि क्या यह प्रथा किसी धर्म की आवश्यक और अनिवार्य धार्मिक परंपरा है या नहीं। यह प्रश्न संवैधानिक समीक्षा का विषय है न कि केवल आपराधिक न्याय का। इस निर्णय ने इस मुद्दे को धार्मिक स्वतंत्रता और जीवन के अधिकार के बीच संतुलन की दिशा में न्यायिक विमर्श का केंद्र बना दिया। यह विशुद्ध कानूनी प्रश्न मात्र नहीं रहा अपितु भारत के संवैधानिक ढांचे में धार्मिक सहिष्णुता और मानवाधिकार के समन्वय का परीक्षण बन गया।(7)

क्या संथारा जैसी प्रथा अन्य धर्मों में भी है?

जैन धर्म में संथारा की तुलना यदि अन्य धार्मिक परंपराओं से की जाए तो ऐसे अनेक उदाहरण भारत के सांस्कृतिक इतिहास में मिलते हैं। हिंदू धर्म में 'प्रायोपवेशन', 'जल समाधि' तथा 'महासमाधि' जैसी संकल्पनाएं हैं जिनमें व्यक्ति जीवन के अंतिम चरण में धीरे-धीरे आहार त्याग कर मृत्यु का वरण करता है। बौद्ध धर्म में कुछ थेरवाद भिक्षु ध्यानावस्था में भोजन त्याग कर निर्वाण प्राप्ति की दिशा में इसी प्रकार की साधना करते हैं। सिख धर्म में गुरु गोबिंद सिंह जी के आत्म-त्याग को भी कई विद्वान इसी श्रेणी में रखते हैं। ऐसे में केवल संथारा को ही आत्महत्या मानना और उसे अपराध की श्रेणी में लाना एक प्रकार का धार्मिक भेदभाव प्रतीत होता है जो संविधान की धर्मनिरपेक्षता की मूल भावना के विपरीत है।(8)

संथारा का समर्थन करने वाले विद्वानों और धार्मिक गुरुओं का तर्क है कि यह प्रथा न केवल आध्यात्मिक उन्नति का माध्यम है, बल्कि व्यक्ति को मृत्यु के भय से मुक्त करती है। आधुनिक समय में जब जीवन के अंतिम पड़ाव पर पीड़ा, अकेलापन और असहायता प्रमुख समस्याएं हैं, संथारा मृत्यु को भय नहीं, बल्कि मोक्ष का द्वार मानने की दिशा में एक वैकल्पिक दृष्टिकोण प्रस्तुत करता है। यह प्रक्रिया एक प्रकार का "लिविंग विल" है, जिसमें व्यक्ति स्वयं यह तय करता है कि वह कब और कैसे जीवन से विदा ले। सुप्रीम कोर्ट ने अपने ऐतिहासिक निर्णय "कॉमन कॉज वर्सेज युनियन ऑफ इण्डिया-2018" में "पैसिव युथनेसिया" और "लिविंग विल" को संवैधानिक मान्यता प्रदान की थी। (9) यह निर्णय दर्शाता है कि व्यक्ति की स्वेच्छा और गरिमा जीवन के अंतिम चरण में भी महत्वपूर्ण है। यदि इच्छा मृत्यु को संवैधानिक संरक्षण मिल सकता है तो क्या संथारा, जो उससे कहीं अधिक संयमित, धार्मिक और सामाजिक सहमति से सम्पन्न प्रथा है, उसे संवैधानिक संरक्षण नहीं मिलना चाहिए?

संथारा का विश्लेषण केवल कानून या धर्म तक सीमित नहीं है, यह जीवन और मृत्यु के गूढ़ प्रश्नों से भी जुड़ा है। क्या किसी व्यक्ति को यह अधिकार नहीं कि वह तय कर सके कि कब उसका जीवन पूर्ण हुआ और कब उसे विदा लेना है? क्या यह निर्णय केवल शरीर के अस्तित्व पर आधारित होना चाहिए या आत्मा की पूर्णता और आध्यात्मिक लक्ष्य की पूर्ति के आधार पर? पश्चिमी देशों में यह विमर्श युथेनेसिया और असिस्टेड़ सुसाइड के रूप में चल रहा है। वहाँ पर भी इस बात पर चर्चा हो रही है कि क्या जीवन केवल शरीर के सक्रिय होने का नाम है या उसकी गुणवत्ता, आत्मनिर्णय और गरिमा भी उतनी ही आवश्यक है। ऐसे में भारत जैसे देश, जहाँ आत्मा की अमरता, पुनर्जन्म और

मोक्ष जैसी संकल्पनाएं सांस्कृतिक जीवन का हिस्सा हैं, वहाँ संथारा जैसी प्रथा का स्थान अलग और विशिष्ट होना स्वाभाविक है।

निष्कर्ष

अंततः यह कहा जा सकता है कि संथारा एक जटिल धार्मिक और दार्शनिक परंपरा है, जिसे केवल अपराध या आत्महत्या की दृष्टि से देखना न्यायसंगत नहीं। यह एक वैकल्पिक मृत्यु दृष्टि है जो गरिमा, आत्मसाक्षात्कार और मोक्ष की दिशा में व्यक्ति को निर्देशित करती है। भारत का संविधान, जो व्यक्ति की गरिमा और धार्मिक स्वतंत्रता की रक्षा करता है, इस प्रथा को विनियमित तो कर सकता है, परंतु उसे पूर्णतः प्रतिबंधित नहीं किया जाना चाहिए। उचित यही होगा कि संथारा को अपनाने के लिए एक स्पष्ट नीतिगत ढांचा, मानसिक स्वास्थ्य परीक्षण, गैर-प्रेरित घोषणा पत्र और सामाजिक निरीक्षण तंत्र तैयार किया जाए, जिससे कि इस पवित्र प्रथा का दुरुपयोग न हो और इसकी गरिमा बनी रहे। निष्कर्षतः कहा जा सकता है कि संथारा न तो जीवन से पलायन है, न ही मृत्यु की इच्छा, बल्कि यह एक संतुलित, संयमित और आत्मिक रूप से उन्नत प्रक्रिया है, जो जैन धर्म की आध्यात्मिक परंपरा का गौरवशाली प्रतीक है। यह न केवल धर्म का अनुशासन है, बल्कि यह समस्त मानवता के लिए एक ऐसा चिंतन प्रस्तुत करता है, जहाँ मृत्यु भी गरिमा से विभूषित हो सकती है। जैन दर्शन का यह दृष्टिकोण आज के भौतिकवादी युग में मृत्यु के भय से जूझती मानवता को संयम, शांति और मोक्ष की ओर प्रेरित करता है।

संदर्भ

1. **साध्वी कुमुदलता 'अहिंसा:जैन धर्म मूल' संपादकीय, राजस्थान पत्रिका, 6 अक्टूबर, 2015.**
2. **ऋषभ नाटाणी 'जैन धर्म, तप और संथारा पर दार्शनिक विश्लेषण' जर्नल ऑफ इण्डियन फिलॉसफी, वाल्यूम-39, इश्यू-02, अप्रेल-2018, पृ.सं-53.**
3. **सूर्यांशी पाण्डेय 'संथारा का मतलब क्या आत्महत्या होता है?' बीबीसी हिन्दी, डिजिटल प्लेटफॉर्म, 6 सितंबर, 2018.** https://www.bbc.com/hindi/india-45399805
4. **फैजान मुस्तफा 'राइट टू लाईफ इज नॉट मियर एनिमल एक्जिटेंस' द इण्डियन एक्सप्रेस, एडिटोरियल, 10 दिसंबर, 2015.**
5. **एम.लक्ष्मीकांत 'भारत की राजव्यवस्था' मेग्रा हिल प्रकाशन, नई दिल्ली, सातवां संस्करण-2023, पृ.सं-123.**
6. **नवनीत जैन बनाम राजस्थान स्टेट, 10 अगस्त, 2015.**
7. **सर्वोच्च न्यायालय का निर्णय 'कॉमन कॉज वर्सेज बनाम भारत संघ-2018.**
8. **'राईट टू डाई विद डिग्निटी: लीगल एण्ड एथिकल आस्पैक्ट्स' रिसर्च एनालिसिस टुडे जर्नल, वाल्यूम- 8, इश्यू-3, जनवरी-2015, पृ.सं.-81.**
9. **कृष्ण दास राजगोपाल 'सुप्रीम कोर्ट लिफ्ट स्टे ऑन संथारा' द हिन्दू, 4 दिसंबर-2021. https://share.google/gZJ3ubYw77PEXahCY**